शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 मई 2019
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

श्रीमद्भगवद्गीता के ज्ञान, भक्ति एवं कर्मयोग की वर्तमान में उपादेयता

डॉ. उमा दवे
सहायक प्राध्यापक
टी. एन. बी कॉलेज,
भागलपुर, बिहार, भारत

शोध संक्षेप

वर्तमान समय का मनुष्य अनाचार, अत्याचार, आतंकवाद, भ्रष्टाचार, तनाव, हताशा एवं निराशा के दौर से गुजर रहा है। नैतिक मूल्यों का अवमूल्यन दिनोंदिन होता जा रहा है । नीति और सदाचार तो मानों ग्रंथों की शोभा बनकर रह गए हैं । ऐसे समय में मानव की हताशा-निराशा मिटाने एवं उसे अपने वास्तविक जीवन लक्ष्य का बोध कराने हेतु गीता एक अदभुत ग्रन्थ है। प्रस्तुत शोध पत्र में भगवद्गीता में वर्णित ज्ञान, भक्ति एवं कर्म योग की वर्तमान में उपादेयता पर विचार किया गया है।

भूमिका

श्रीमद्भावाद्गीता ऐसे दिव्य ज्ञान से भरपूर है कि उसके अमृत पान से मनुष्य जीवन में साहस ममता, सहजता, स्नेह, शांति आदि गुण विकसित होते हैं तथा अधर्म और अनाचार का मुकाबला करने का सामर्थ्य आ जाता है एवं मानसिक तनाव, चिंता, भय आदि से मुक्ति मिलती है।

डॉ.राधाकृष्णन के शब्दों में "गीता परस्पर विरोधी तत्वों का समन्वय करके उन्हें एक पूर्ण में मिलाती है।"[1]

गीता में भारतीय धर्म तथा दर्शन के विभिन्न मतों का सार संगृहीत है। गीता में वेदों, उपनिषदों, ब्रह्मसूत्र तथा सांख्य-योग-मीमांसा-वेदांत आदि दार्शनिक मतों का समन्वय स्पष्ट दिखाई पड़ता है। वैष्णवीय तंत्र सा का कथन है :

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनंदन: ।
पार्थो वत्सुधीर्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत।।

अर्थात सभी उपनिषद गाय है तथा दूध देने वाला ग्वाला स्वयं श्रीकृष्ण है। अर्जुन बछड़े के समान है और गीता रूपी अमृत दूध है।

इस प्रकार परम्परा से यह बात सर्वविदित है कि गीता में उपनिषदों के दर्शन का निचोड़ है। वास्तव में उपनिषद इतने गहन और विस्तृत हैं कि साधारण मनुष्य के लिए उनका अध्ययन कर संसार में अपने कर्तव्य का ज्ञान कर लेना बड़ा कठिन है। गीता उसी सत्य को अत्यंत स्पष्ट और ओजस्वी शब्दों में सामने रखती है। अत: भारतीय दर्शन में गीता का महत्त्व सदा से ही रहा है।

शताब्दियों से गीता भारतवासियों के लिए महान प्रेरणा का स्रोत रही है और आज भी है। यही नहीं, भारत तथा अन्य देशों के अनेक महान विचारकों ने अपने-अपने दार्शनिक सिद्धांतों के अनुसार भिन्न-भिन्न प्रकार से गीता की व्याख्या की है। इन विचारकों में शंकर, रामानुज, निम्बार्क, अरविन्द, लोकमान्य तिलक, महात्मा गांधी आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। शंकर के मतानुसार मोक्ष के लिए गीता में ज्ञान को सर्वाधिक महत्व दिया गया है। वे कहते हैं तदर्थं विज्ञाते समस्त पुरुषार्थ सिद्धि इसके उपदेश

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 मई 2019
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

का मर्म समझने से मनुष्य के सर्व पुरुषार्थ की सिद्धि होती है। रामानुज तथा निम्बार्क का विचार है कि गीता भक्ति को ही सर्वोच्च स्थान देती है। लोकमान्य तिलक का मत है कि गीता में निष्काम कर्म को ही सर्वाधिक महत्व दिया गया है और इसे ज्ञान तथा भक्ति की अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ माना गया है।

स्पष्ट है कि विभिन्न विद्वानों ने गीता के विभिन्न पक्षों को विशेष महत्त्व देकर मानव जीवन के लिए उसकी उपादेयता सिद्ध की है। इस प्रकार प्राचीन काल से वर्तमान युग तक गीता समस्त भारतीय चिंतन एवं दर्शन को निरंतर प्रभावित करती रही है और यह व्यापक भाव उसकी विशेषता को बतलाता है।

मूलतः उपनिषदों पर आधारित होने के कारण गीता उन सभी नैतिक दार्शनिक सिद्धांतों को स्वीकार करती है जिनका विवेचन उपनिषदों में किया गया है। ऐसी स्थिति में यह कहना अनुचित न होगा कि गीता का नैतिक दर्शन उपनिषदों के नैतिक दर्शन की भांति मूलतः अध्यात्मवादी है।

स्वामी विवेकानंद कहते हैं, "श्रीमदभगवद्गीता उपनिषद रूपी बगीचों में से चुने हुए आध्यात्मिक सत्यरूपी पुष्पों से गुंथा हुआ पुष्पगुच्छ है"।

श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी ने इसे मानव की ज्योति के रूप में वर्णित करते हुए कहा है कि, "इस छोटे से ग्रन्थ में अडिग, अनंत तथा दुर्धर्ष मानवता की ज्योति जागृत रखी गयी है। यह मानवता, पराजय और मृत्यु का सामना कर सकती है और अर्वाचीन पश्चिम ने जिस जड़वाद के द्वारा जगत में जहर फैलाया है, उसके आघातों के सामने भी डटकर खड़े रहने की सामर्थ्य इसमें है।"[2]

वर्तमान में उपादेयता

गीता की प्रासंगिकता वर्तमान काल में भी उतनी ही है जितनी महाभारत काल में अर्जुन के लिए थी। यह संसार एक युद्ध के मैदान के समान ही है। यहां सभी मनुष्य को काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, निराशा, हताशा, तनाव, चिंता आदि के साथ संघर्षरत रहना पड़ता है। अर्जुन ने युद्ध में थोड़े ही दिन शत्रुओं के साथ युद्ध किया था परंतु वर्तमान में मनुष्य प्रायः हर समय जीवन संग्राम में जूझता ही रहता है। गीता जीवन में विजय लाभ के मार्ग को स्पष्ट करती है। गीता के उपदेश अथवा शिक्षाएं वह प्रकाश है, जिसके सहारे मानव अपने जीवन की गुत्थियों को सुलझा सकता है।

गीता का संदेश और उसकी शिक्षा सार्वजनिक है सांप्रदायिक नहीं । श्रीमद्भगवद्गीता किसी एक धर्म, जाति अथवा संप्रदाय से संबंधित ग्रंथ नहीं है वरन विश्व के समस्त मानव के कल्याण की अलौकिक सामग्री से परिपूर्ण ग्रंथ है। 18 अध्यायों एवं 700 श्लोकों में रचित यह छोटा सा ग्रंथ भक्ति, ज्ञान, योग एवं निष्काम कर्म आदि से भरपूर है।

गीता में वर्णित तीन मार्ग - ज्ञानयोग, भक्तियोग एवं कर्मयोग

गीता में भक्तियोग, ज्ञानयोग एवं कर्मयोग - इस प्रकार मुक्ति के तीन मार्ग बतलाए गए हैं। योग शब्द युज् धातु से बना है जिसका अर्थ है मिलना अथवा संयोग होना। इस तरह योग संबंध वाचक है। गीता में यह संबंध आत्मा और परमात्मा में, जीव और शिव में संबंध है। गीता इसे ही मुक्ति लाभ कहती है। इस तरह योग मुक्ति का साधन है।"[3]

श्रीमद्भगवद्गीता में आता है

भगवान श्रीकृष्ण ने कहा - प्रिय उद्धव! मैंने ही वेदों एवं अन्यत्र भी मनुष्यों का कल्याण करने के

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 मई 2019
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

लिए अधिकारी भेद से तीन प्रकार के योगों का उपदेश किया है। वे हैं - ज्ञान, कर्म और भक्ति। मनुष्य के परम कल्याण के लिए इनके अतिरिक्त और कोई उपाय कहीं नहीं है।

उद्धव जी! जो लोग कर्मों तथा उनके फलों से विरक्त हो गए हैं और उनका त्याग कर चुक हैं, वे ज्ञानयोग के अधिकारी है।।

इसके विपरीत जिनके चित्त में कर्म और उनके फलों से वैराग्य नहीं हुआ है उनमें दुख बुद्धि नहीं हुई है वे सकाम व्यक्ति कर्मयोग के अधिकारी हैं।

जो पुरुष न तो अत्यंत विरक्त हैं और न अत्यंत आसक्त ही हैं तथा किसी पूर्वजन्म के शुभ कर्म से सौभाग्यवश मेरी लीला-कथा आदि में उसकी श्रद्धा हो गयी है, वह भक्तियोग का अधिकारी है। उसे भक्तियोग द्वारा सिद्धि मिल सकती है।''[4]

तिलकजी कहते हैं, ''भक्ति मार्ग और ज्ञान मार्ग का अंतिम सत्य एक ही है और परमेश्वर के अनुभवनात्मक ज्ञान से ही अंत में मोक्ष मिलता है, यह सिद्धांत दोनों मार्गों में एक ही-सा बना रहता है।''[5]

चंद्रधर शर्मा के अनुसार, ''गीता का भक्तियोग ज्ञान और कर्म से अनुप्राणित है। पराभक्ति पराज्ञान और निष्काम कर्म वस्तुतः एक ही हैं क्योंकि तीनों का अर्थ है - निर्विकल्प अपरोक्ष आत्मानुभूति। भक्ति, ज्ञान और कर्म का भेद लौकिक व्यवहार में ही है, क्योंकि अपनी चरम अवस्था में ये सभी अपरोक्षानुभूति में परिणत हो जाते हैं। इस प्रकार गीता ने इनका समन्वय करके साधना मार्ग को सरल, सुबोध और सुगम बना दिया है।''[6]

ज्ञानयोग

गीता में ज्ञान योग की भी चर्चा की गयी है। न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते अर्थात इस संसार में ज्ञान के समान पवित्र करने वाला निस्संदेह कुछ भी नहीं है। ज्ञान से तात्पर्य यहां ब्रह्मज्ञान से है, ब्रह्मविद्या से है। सा विद्या या विमुक्तये विद्या वही है जो मुक्त करे और वह विद्या ब्रह्मविद्या है। ब्रह्म से तात्पर्य उस परम चेतना से है जिससे सब कुछ प्रकाशित होता है, संचालित होता है, चेतनवान होता है।

उपनिषद कहते हैं, वह परम तत्व तुम हो तत्वमसि। अयं आत्मा ब्रह्म..यह आत्मा ही ब्रह्म है अर्थात आत्मा और ब्रह्म में कोई भेद नहीं है। जब ज्ञान योग के द्वारा मनुष्य यह जान लेता है कि वह वास्तव में शरीर मात्र नहीं है बल्कि परम चेतन आत्मा है तो वह भय, चिंता, तनाव, विषाद आदि से मुक्त हो जाता है। ज्ञानयोग के माध्यम से वह जान लेता है कि वह आत्मा कभी नष्ट नहीं होता। वह अविनाशी है, अमर है, अजर है, शाश्वत है। उसको जान लेने के बाद कुछ जानना शेष नहीं रहता। वही अपना वास्तविक स्वरूप है, ब्रह्म स्वरूप है। उसीको तत्व से जान लेना यही ज्ञान योग है।

ज्ञान योग निवृत्ति मार्ग पर अधिक जोर देता है। संसार को असार तथा आत्मा को परमात्मस्वरूप समझना ही ज्ञान योग है। ज्ञानी व्यक्ति के लिए यह दृश्य जगत माया है, मृगतृष्णा है स्वप्न है। केवल ब्रह्म ही सत्य है, जगत मिथ्या है। ब्रह्म ही आत्मा है, आत्मा ही ब्रह्म है जगत में सब आत्मरूप है, ब्रह्मरूप है।

आध्यात्मिक ज्ञान में ज्ञाता और ज्ञेय का द्वैत नष्ट हो जाता है। ज्ञानी अध्यात्म ज्ञान के द्वारा सब भूतों में और आत्मा में समस्त भूतों को देखता है।

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि।
ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः।।[7]

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 मई 2019
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

वह समस्त विश्व को ईश्वर में और ईश्वर में समस्त विश्व को देखता है। ज्ञानी के लिए मिट्टी के टुकड़े, पत्थर के टुकड़े और स्वर्ण के टुकड़े में कोई भेद नहीं होता। गीता में ज्ञानयोगी को समदर्शी कहा गया है। विश्व के समस्त प्राणियों चर अचर को अवह समभाव से देखता है। ज्ञानी, ब्राह्मण, गौ, हाथी, कुत्ता, और चांडाला को समान रूप से देखता है। तत्व ज्ञानी का विषम भाव नष्ट हो जाता है। व्यावहारिक दृष्टि से ब्राह्मण और चांडाल में भेद है, परंतु पारमार्थिक दृष्टि से भेद नहीं है। ज्ञानी की दृष्टि में एक सच्चिदानंद ब्रह्म या परमात्मा की ही सत्ता है।

विद्याविनयसंपन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।
शुनि चैव श्वपाके च पंडिता समदर्शिनः।।[8]

भक्तियोग

भक्तियोग गीता का अमृत फल है। यह सब विद्याओं का राजा है राजविद्या तथा समस्त रहस्यों का रहस्य है। राजविद्या राजगुह्यम् पवित्रमिदमुत्तमम् ।

भक्ति शब्द भज् सेवयाम धातु से बना है जिसका अर्थ है सेवा करना। भक्ति शब्द धातु से भाववाचक क्तिन प्रत्यय लगाकर बना गया है। किसी को अपने से उत्कृष्ट सत्ता मानवकर उसके सामने श्रद्धापूर्वक झुकना और उसके अनुकूल व्यवहार करना भक्ति कहलाता है।

ग् ीता के अनुसार ईश्वर की शरण में जाना ही भक्ति है। श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं:

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।।

संपूर्ण धर्मों का आश्रय छोड़कर तू केवल मेरी शरण में आ जा। मैं तुझे संपूर्ण पापों से मुक्त कर दूंगा। चिंता मत कर।'10

श्रीमद्भगवद्गीता के 18वें अध्याय के 62वें श्लोक में आता है:

त्वमेव शरणं गच्छ सर्व भावेन भारत।
तत्प्रसादात्परां शांतिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम्।।

हे भारत तू सब प्रकार से उस परमेश्वर की ही शरण में जा। उस परमात्मा की कृपा से ही तू परम शांति को तथा सनातन परमधान का प्राप्त होगा।

गीता के सातवें अध्याय में भी भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते।। अर्थात जो मेरी शरण में आता है वह माया से तर जाता है।''[11]

कर्मयोग

डॉ.राधाकृष्णन ने कहा है कि कर्म योग हमें एक ऐसी अवस्था पर ले जात है जहां भावना ज्ञान और संकल्प सभी उपस्थित हैं।''[12]

यह सत्य है कि गीता में अनेक धार्मिक तथा दार्शनिक सिद्धांतों का विवेचन किया गया है किंतु वास्तव में उसका मुख्य उद्देश्य मनुष्य को अपने कर्तव्य का ज्ञान कराना ही है।

अपने प्रियजनों के प्रति मोह और ममता के कारण अर्जुन क्षात्र धर्म के अनुरूप युद्ध संबंधी अपने कर्तव्य से विचलित हो जाता है और भगवान श्रीकृष्ण से स्पष्टतः कह देता है कि युद्ध क्षेत्र में उपस्थित अपने गुरुजनों तथा प्रियजनों की हत्या करना उसे महापाप प्रतीत होता है, अतः वह इनसे युद्ध नहीं कर सकता। इस प्रकार भावनात्मक दुर्बलता के कारण अर्जुन अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करना अस्वीकार करके क्षात्र धर्म संबंधी अपने मूल कर्तव्य का उल्लंघन करने के लिए तैयार हो जाता है। उसकी इस दुर्बलता को दूर करने तथा उसे पुनः दृढ़तापूर्वक अपने कर्तव्य मार्ग पर चलने की प्रेरणा देने के लिए ही भगवान श्रीकृष्ण ने गीता का ज्ञान कराया है।

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 मई 2019
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

कर्म योग क्या है ? योगपूर्वक कर्म का संपादन करना ही कर्म योग है। यह योग ही कर्म का रहस्य है जिसका अनावरण कर्म योग में है।

जो कुछ किया जाये वह कर्म है। शरीर, मन, बुद्धि से हम सर्वदा कुछ न कुछ कर्म करते रहते हैं। ये सभी कर्म हमारे शारीरिक, मानसिक या बौद्धिक कर्म है। जन्म लेने वाला कोई भी व्यक्ति क्षणभर के लिए भी बिना कर्म किए नहीं रह सकता।

गीता कहती है :

न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत् ।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिर्जैगुणैः।।

निस्संदेह कोई भी मनुष्य किसी भी काल में क्षण् मात्र भी बिना कर्म किए नहीं रहता, क्योंकि सारा मनुष्य समुदाय प्रकृतिजनित गुणों द्वारा परवश हुआ कर्म करने के लिए बाध्य किया जाता है।''[13]

हम सर्वदा कर्म करते रहते हैं और शुभ अशुभरूप फल भी भोगते रहते हैं। फल भोगने के लिए हमें शरीरधारी होना पड़ता है। इस प्रकार कर्म और फल की अनवरत धारा चलती रहती है। किंतु जिसने कर्म को कर्मयोग में परिणत कर दिया वह कर्म करते हुए भी बंधन में नहीं पड़ता यही गीता का उपदेश है।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूमा ते संगोस्त्वकर्मणि।।

तेरा कर्म करने में ही अधिकार है उसके फल में कभी नहीं। इसलिए तू कर्मो के फल का हेतु मत हो तथा तेरी कर्म न करने में भी आसक्ति न हो।''[14]

इस कर्म योग में आरंभ का अर्थात बीज का नाश नहीं और उल्टा फलरूप दोष भी नहीं है बल्कि इस कर्मयोगरूप धर्म का थोड़ा-सा भी साधन जन्म-मृत्यु रूप महान भय से रक्षा कर लेता है।''[15]

गीता का यह निश्चित मत है कि मनुष्य अपने जीवन में एक क्षण के लिए भी पूर्णतः निष्क्रिस नहीं रह सकता, क्योंकि शरीर का अस्तित्व बनाए रखने के लिए किसी न किसी प्रकार का कर्म करना अनिवार्य है। इस प्रकार मनुष्य के लिए कर्म त्याग अनावश्यक ही नहीं अपितु पूर्णतया असंभव भी है। यही कारण है कि भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन से किसी भी स्थिति में कर्मों का त्याग करने के लिए ना कहकर सभी स्थितियों में केवल कर्मफल आसक्ति का त्याग करने के लिए ही कहा है और इस निष्काम कर्म योग को ज्ञान योग तथा भक्ति योग की अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ माना है।

श्रेष्ठता की दृष्टि से ज्ञानयोग, भक्तियोग तथा निष्काम कर्मयोग की तुलना करते हुए गीता के 12वें अध्याय के 12वें श्लोक में श्रीकृष्ण ने स्पष्ट कहा है:

श्रेयो ही ज्ञानमभ्यासाज्ज्ञानाद्ध्यानं विशिष्यते।
ध्यानात्कर्मफलत्यागस्त्यागाच्छान्तिरनन्तरम् ।।

मर्म को न जानकर किये हुए अभ्यास से ज्ञान श्रेष्ठ है, ज्ञान से मुझ परमेश्वर के स्वरूप का ध्यान श्रेष्ठ है और ध्यान से भी सब कर्मों के फल का त्याग श्रेष्ठ है, क्योंकि त्याग से तत्काल ही परम शांति होती है।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि गीता मनुष्य को कर्म त्याग करके संसार से भागने के लिए नहीं अपितु संसार में रहते हुए फल आसक्ति का त्याग करके कर्म करने के लिए प्रेरित करती है। अतः उसे कर्मप्रधान मानना अधिक युक्तिसंगत प्रतीत होता है।

गीता का निष्काम कर्मयोग जीवन की सच्चाई को प्रकट करता है। यह वह मार्ग है जिस पर चलते हुए मनुष्य अपने परम लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। निष्काम भाव से किए गए कर्म

बंधन कारक नहीं होते। ऐसे कर्मो से ही व्यक्ति पूर्णता की अवस्था में पहुंचता है ब्राह्मी स्थिति में पहुंचता है या ईश्वर में निवास करता है और परम शांति को प्राप्त करता है।"[16]

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि गीता में कर्म भक्ति ज्ञान तीनों का समन्वय है और तीनों का आखिरी फल है परम तत्व को जानना। तीनों अपनी चमर अवस्था में अपरोक्षानुभूति में परिणत हो जाते हैं।

मानव कर्म किए बिना नहीं रह सकता, जिसके लिए गीता निष्काम कर्म योग का मार्ग प्रशस्त करती है ताकि वह कर्मबंधन से छूट सके। मनुष्य में जिज्ञासा भी स्वभावतः होती ही है, अतः गीता ज्ञानयोग के माध्यम से आत्मा को परमात्मरूप जानकर मुक्त होने का संदेश देती है एवं मनुष्य में निहित भावना को भक्तियोग में रूपांतरित करके भवसागर से मुक्त होने का मार्ग भी गीता ने दर्शाया है। इस प्रकार श्रीमद्गवद्गीता के ये तीनों योग - ज्ञानयोग, भक्तियोग एवं कर्मयोग वर्तमान समय में भी मानव जीवन की समस्याओं का समाधान करने में सहायक हैं।

संदर्भ ग्रंथ

1 डॉ.रामनाथ शर्मा, भारतीय दर्शन के मूलतत्व पृष्ठ 51

2 कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी, भगवद्गीता और आधुनिक जीवन, 1958

3 डॉ.शोभा निगम, भारतीय दर्शन, पृष्ठ 52

4 महर्षि वेदव्यास, श्रीमद्भागवत पुराण, 11.20.6-8

5 लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक, श्रीमद्भगवद्गीता रहस्य, पृष्ठ 189

6 चंद्रधर शर्मा, भारतीय दर्शन आलोचना और अनुशीलन, पृष्ठ 20

7 गीता, 6.29

8 गीता, 5.18

9 गीता, 9.2

10 गीता 18.66

11 गीता, 7.14

12 डॉ..वी.बी.सिंह, नीतिशास्त्र, पृष्ठ 276

13 गीता, 3.5

14 गीता, 2.47

15 गीता, 2.40

16 डॉ..डी.डी.बंदिष्टे, डॉ..रामशंकर शर्मा, भारतीय दार्शनिक निबंध, पृष्ठ 257